भारत में राजनीतिक आरक्षण और महिला सशक्तिकरणः एक विश्लेषण

धनुजा
शोधार्थी
जय नारायण विश्वविद्यालय,
जोधपुर
ईमेलः dhanujachoudhary1993@gmail.com

सारांश

निर्णय लेने में महिलाओं और पुरुषों की समान भागीदारी के लक्ष्य को प्राप्त करने से एक संतुलन प्राप्त होगा जो समाज की संरचना को अधिक सटीक रूप से दर्शाता है और लोकतंत्र को मजबूत करने और इसके उचित कामकाज को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है। महिलाओं की सक्रिय भागीदारी और निर्णय लेने के सभी स्तरों पर महिलाओं के दृष्टिकोण को शामिल किए बिना, समानता, विकास और शांति के लक्ष्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। महिलाएँ दुनिया की आधी से अधिक आबादी और वैश्विक मतदाताओं के आधे से भी कम का प्रतिनिधित्व करती हैं। फिर भी, महिलाएँ दुनिया के विधायी निकायों में प्रतिनिधियों का एक मामूली अनुपात बनाती हैं। 2008 में, राष्ट्रीय संसदों में महिला प्रतिनिधित्व की औसत दर मात्र 18 प्रतिशत है। भारत ने अभी तक इन असंतुलनों को दूर करने में उल्लेखनीय रूप से सीमित सफलता प्राप्त की है, जहाँ वर्तमान में महिलाओं के पास केवल 8 प्रतिशत संसदीय सीटें हैं। हालाँकि भारत महिलाओं को वोट देने का अधिकार देने वाले पहले लोकतांत्रिक देशों में से एक था, लेकिन महिलाओं को न तो विधायी स्थानों में प्रतिनिधित्व दिया जाता है और न ही वे राष्ट्रीय कानूनों के निर्माण में योगदान देती हैं। अब भारत में महिलाओं को संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों के अनुसार पुरुषों के साथ समानता का एक अनूठा दर्जा प्राप्त है। नीति निर्धारण लक्ष्य के रूप में महिला

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 02.01.2025
Approved: 17.03.2025

धनुजा

भारत में राजनीतिक आरक्षण और महिला सशक्तिकरणः एक विश्लेषण

RJPP Oct.24-Mar.25,
Vol. XXIII, No. I,
Article No. 15
Pg. 120-126

Online available at:
https://anubooks.com/journal-volume/rjpp-sept-2025-vol-xxiii-no1

सशक्तीकरण का उदय लैंगिक असमानताओं और महिलाओं के खिलाफ भेदभाव का मुकाबला करने के लिए वैश्विक महिला आंदोलन के एजेंडे को दर्शाता है। भारत सरकार ने आरक्षण या सुरक्षात्मक भेदभाव की नीति के माध्यम से अनुसूचित जाति की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को ऊपर उठाने के लिए संरचनात्मक प्रावधान किए हैं। महिला सशक्तीकरण से संबंधित एक महत्वपूर्ण मुद्दा राज्य विधानसभा और संघीय संसद में उनके लिए सीटों का आरक्षण है। 73वें और 74वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 ने पंचायतों और नगर निकायों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटें प्रदान की हैं। भारत में महिला सशक्तीकरण कई अलग–अलग चर पर निर्भर करता है जिसमें भौगोलिक स्थिति (शहरी/ग्रामीण),शैक्षिक स्थिति, सामाजिक स्थिति (जाति और वर्ग) और आयु शामिल हैं हालांकि, समुदाय स्तर पर नीतिगत प्रगति और वास्तविक अभ्यास के बीच महत्वपूर्ण अंतर हैं। आरक्षण से लाभान्वित होने के बावजूद, महिलाओं को राजनीति में भाग लेने पर अक्सर बाधाओं का सामना करना पड़ता है। हालांकि, राजनीतिक एजेंसी के लिए महिलाओं की आकांक्षाओं को संबोधित करने के लिए हमें उभरते अवसरों का पता लगाना चाहिए, न कि केवल चुनौतियों का।

मुख्य शब्द

महिला, सशक्तिकरण, आरक्षण, लिंग, निर्णय लेना, समानता, भारत।

परिचय

एक सामाजिक संदर्भ बनाना जिसमें कोई व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से सामाजिक परिवर्तन के लिए निर्णय और विकल्प ले सकता है, उसे सशक्तिकरण के रूप में देखा जा सकता है। जानकारी, शक्ति और अनुभव प्राप्त करके, यह आंतरिक क्षमता में सुधार करता है। सशक्तिकरण किसी व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से सोचने, कार्य करने और अपने काम का प्रबंधन करने की अनुमति देने या अनुमोदित करने की प्रक्रिया है। यह वह तरीका है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति अपने जीवन की परिस्थितियों और भविष्य की जिम्मेदारी ले सकता है। संसाधनों (भौतिक, मानवीय, बौद्धिक और वित्तीय) के साथ–साथ विचारधारा (विश्वास, मूल्य और दृष्टिकोण) पर नियंत्रण सशक्तिकरण का एक घटक है। संसाधनों को प्राप्त करने या पारंपरिक सोच को बदलने में बाहरी बाधाओं को दूर करने की क्षमता केवल यह महसूस करने का परिणाम नहीं है कि किसी के पास अधिक बाहरी नियंत्रण है, बल्कि बढ़ती आंतरिक क्षमता, बढ़े हुए आत्मविश्वास और किसी की जागरूकता में आंतरिक परिवर्तन का भी परिणाम है। सभ्यता की उन्नति महिलाओं के सशक्तीकरण पर बहुत अधिक निर्भर करती है। इसका अर्थ है लोगों को अपने निर्णय लेने, खुद के लिए सोचने और समाज के समान सदस्य के रूप में योगदान देने की पूरी क्षमता तक पहुँचने की स्वतंत्रता देना। भारतीय समाज के सभी स्तरों पर महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और मुक्ति महत्वपूर्ण है। आरक्षण के कारण लाभ होने के बावजूद, राजनीति में शामिल होने पर महिलाओं को अक्सर बाधाओं का सामना करना पड़ता है। राजनीतिक कार्रवाई के लिए महिलाओं की महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए, हमें नए अवसरों और मौजूदा चुनौतियों दोनों की जांच करनी चाहिए। दुनिया के बाकी हिस्सों की तरह, भारत में महिलाओं की आर्थिक और राजनीतिक स्थिति में पहचान के साथ–साथ महत्वपूर्ण क्षेत्रीय विविधताएँ भी हैं। महिलाएँ एक समरूप समूह नहीं हैं जिन्हें केवल सहायता या समर्थन की उनकी इच्छा के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। सशक्तिकरण एक ऐसी तकनीक है जो व्यक्तियों को उनके जीवन को प्रभावित करने वाले चरों पर अपना

नियंत्रण स्थापित करने में सहायता करती है। महिलाओं को अधिक जानकार, राजनीतिक रूप से सक्रिय, आर्थिक रूप से सफल और स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में विकसित करना जो उनसे संबंधित मुद्दों पर सार्थक बातचीत कर सकें, यही महिलाओं को सशक्त बनाने का अर्थ है।

महिला सशक्तिकरण शब्द का पहली बार 1985 में नैरोबी में अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में इस्तेमाल किया गया था, जिसमें इसे महिलाओं के पक्ष में सामाजिक शक्ति और संसाधन नियंत्रण के पुनर्वितरण के रूप में वर्णित किया गया था। लोकतंत्र को विकसित करने और इसके सही संचालन को आगे बढ़ाने के लिए, निर्णय लेने में महिलाओं और पुरुषों की समान भागीदारी का लक्ष्य एक संतुलन प्रदान करेगा जो समाज के स्वरूप का अधिक सटीक रूप से प्रतिनिधित्व करता है। समानता, विकास और शांति के उद्देश्यों को महिलाओं की सक्रिय भागीदारी और निर्णय लेने के सभी स्तरों पर महिलाओं के दृष्टिकोण को शामिल किए बिना हासिल नहीं किया जा सकता है। भारत ने अब तक इन असंतुलनों को दूर करने में केवल मामूली सफलता हासिल की है, वर्तमान में महिलाओं के पास केवल 8 प्रतिशत संसदीय सीटें हैं। महिलाओं को न तो विधायी निकायों में प्रतिनिधित्व दिया जाता है और न ही राष्ट्रीय कानूनों के निर्माण में सक्रिय रूप से शामिल किया जाता है, इसके बावजूद कि भारत महिलाओं को वोट देने का अधिकार देने वाले पहले लोकतांत्रिक देशों में से एक है।

महिलाओं की स्थिति

समाज में महिलाओं की भूमिका हमारी सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक मानदंडों, मूल्य प्रणाली और सामाजिक अपेक्षाओं आदि से निर्धारित होती है। विकास की यात्रा में, विभिन्न नीतियों और कार्यक्रमों ने समाज को बदल दिया, इस परिवर्तन के अलावा भारतीय महिलाओं की दुर्दशा में स्थानीय निकायों को छोड़कर औपचारिक राजनीतिक संस्थाओं में उनकी आर्थिक और सामाजिक भागीदारी से स्पष्ट रूप से कोई बदलाव नहीं आया है। निर्णय लेने वाले पदों में महिलाओं की हिस्सेदारी पाँच प्रतिशत से भी कम है। भारत संविधान द्वारा उन्हें दी गई स्थिति और भूमिका और सामाजिक परंपराओं द्वारा उन पर लगाए गए प्रतिबंधों के बीच के अंतर का एक विशिष्ट उदाहरण है। महिलाओं के लिए जो व्यावहारिक और संभव है और उनके लिए उपयोगी है, वास्तव में वह उनकी पहुँच में नहीं है। उन्हें सामाजिक मानदंडों और मानकों के दायरे में रहना पड़ता है, जो बदले में असीम नुकसान पहुँचाते हैं। हिंदू परंपरा में, बेटियों को शादी में देने और शादी के बाद उन्हें अपने ससुर के घर भेजने जैसी प्रथाओं और वंश में निरंतरता बनाए रखने के लिए बेटों को दिए जाने वाले महत्व ने पुरुष प्रधान सामाजिक संरचना को मजबूत किया है। मासिक धर्म की अवधि के दौरान महिलाओं को धार्मिक समारोहों में शामिल होने से रोक दिया जाता है और बच्चे के जन्म के समय महिलाओं की स्थिति पुरुषों की तुलना में कमतर हो जाती है। पितृसत्तात्मक समाज के बारे में नारीवादी दृष्टिकोण आम तौर पर यह है कि यह एक अन्यायपूर्ण व्यवस्था है जिसमें महिलाएँ उन लोगों की श्रेणी में आती हैं जो विभिन्न प्रकार के भेदभाव और शोषण के संपर्क में आती हैं, यह नारीवादी विचार की सार्वभौमिक विशेषता है। महिलाओं के खिलाफ दमन पितृसत्ता में होता है जो महिला लिंग पर पुरुष वर्चस्व की एक पदानुक्रमित प्रणाली है। पितृसत्ता सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों में पुरुष वर्चस्व को संदर्भित करती है। नारीवादी मुख्य रूप से पितृसत्ता शब्द का उपयोग पुरुषों और महिलाओं के बीच शक्ति संबंधों का वर्णन करने के लिए करते हैं। पितृसत्ता महिलाओं पर पुरुष की श्रेष्ठता को दर्शाती है, जीवन

के सभी क्षेत्रों में महिलाओं की पुरुष पर निर्भरता और अधीनता को बनाए रखती है। नतीजतन, परिवार, समाज और राज्य के भीतर सारी शक्ति और अधिकार पूरी तरह से पुरुषों के हाथों में रहते हैं। इसलिए, पितृसत्ता के कारण, महिलाओं को उनके कानूनी अधिकारों और अवसरों से वंचित किया गया, पितृसत्तात्मक मूल्य महिलाओं की गतिशीलता को प्रतिबंधित करते हैं, उनकी खुद की और साथ ही उनकी संपत्ति पर स्वतंत्रता का उल्लंघन करते हैं। यह सच है कि पश्चिम के आधुनिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो भारत में महिलाओं की स्थिति पिछड़ी हुई है। भारत में पितृसत्तात्मक समाज और सामाजिक–आर्थिक पिछड़ेपन के कारण महिलाओं को पुरुषों के समान शिक्षा, स्वास्थ्य, निर्णय लेने से संबंधित समान स्तर के अवसर नहीं मिल पाते हैं, जिससे महिलाएं पिछड़ जाती हैं। महिलाएं घर के कामों की जिम्मेदारी उठाती हैं जैसे भाई–बहनों की देखभाल करना, पानी लाना, जलाऊ लकड़ी इकट्ठा करना, घर की सफाई करना, खाना बनाना आदि।

आरक्षण और महिलाओं का सशक्तिकरण

लैंगिक समानता और वास्तविक लोकतंत्र के लिए महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी एक अनिवार्य शर्त है। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिदृश्य में समानता प्राप्त करने में सहायता करती है। यह सार्वजनिक निर्णय लेने में महिलाओं की प्रत्यक्ष भागीदारी को सुगम बनाती है। जब महिलाएं राजनीति में भाग लेती हैं, तो वे अपनी पूरी क्षमता का एहसास कर सकती हैं और साथ ही राष्ट्र के लिए अपने कौशल का योगदान भी दे सकती हैं। राजनीतिक तंत्र के तहत कुछ घटकों की चर्चा की जाती है, जो महिलाओं की क्षमता को बढ़ाते हैं, उन्हें निम्नलिखित तरीके से समझाया जा सकता हैरू बिना किसी भेदभाव के सभी को राजनीतिक अधिकार लोकतंत्र में देश के सभी नागरिकों के साथ उनकी नागरिकता की स्थिति के आधार पर समान व्यवहार किया जाना चाहिए, न कि उनकी जाति, धर्म और लिंग के आधार पर। समान नागरिकता राजनीतिक समतावाद का मूल है। राजनीतिक समानता का अर्थ है कि प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार है और साथ ही प्रत्येक वोट का समान मूल्य है, चाहे वह किसी भी जाति, धर्म, जाति या लिंग का हो। प्रत्येक नागरिक चुनाव लड़ने और संगठन बनाने के लिए स्वतंत्र है, शांतिपूर्ण तरीके से विरोध कर सकता है। आरक्षण का शाब्दिक अर्थ है किसी विशेष समूह या वर्ग को आगे बढ़ने के लिए स्थान सुरक्षित करना या अवसर प्रदान करना, जो सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से पिछड़ा और हाशिए पर है। आरक्षण किसी भी समाज में मौजूद अंतर को खत्म करने में मदद करता है। राजनीतिक भागीदारी हर राजनीतिक व्यवस्था का एक बुनियादी तत्व है। भागीदारी व्यक्ति को प्रभावी बनने में मदद करती है और उसे राजनीतिक व्यवस्था से जोड़ती है। इसमें मतदान, जानकारी मांगना, वित्तीय योगदान देना और प्रतिनिधियों से संवाद करना जैसी कार्यवाहियाँ शामिल हैं। राजनीतिक भागीदारी एक लोकतांत्रिक व्यवस्था की पहचान है। लोकतंत्र में राजनीतिक मामलों में प्रत्येक नागरिक की सक्रिय भागीदारी महत्वपूर्ण और आवश्यक है क्योंकि यह व्यवस्था को वैधता प्रदान करती है और लोकतांत्रिक ताने–बाने को भी मजबूत करती है। अगर महिला नागरिकों को सरकारी निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेने का समान अवसर नहीं मिलता है तो लोकतंत्र अपने उद्देश्यों में विफल हो जाएगा। उन्हें राष्ट्र निर्माण और राजनीतिक विकास में समान भागीदार होना चाहिए। स्थानीय निकायों में राजनीतिक और निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी और

सक्रियता में सुधार के लिए 1992 में 73वें संविधान संशोधन के कार्यान्वयन के साथ 33 प्रतिशत सीटों को आरक्षित करने का प्रावधान किया गया था। 1992 में संसद द्वारा पारित 73वें संविधान संशोधन अधिनियमों ने स्थानीय निकायों में सभी निर्वाचित कार्यालयों में महिलाओं के लिए कुल सीटों का एक तिहाई सुनिश्चित किया, चाहे वे ग्रामीण क्षेत्र हों या शहरी क्षेत्र। स्थानीय स्वशासन में महिलाओं के लिए आरक्षण समाज में उनकी स्थिति को सुगम, सशक्त और उन्नत बनाता है। यह नया संशोधन (73वां संविधान संशोधन) सरकार की इच्छा को दर्शाता है कि स्थानीय निर्णय लेने वाले निकायों में महिलाओं को आनुपातिक प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। हालाँकि, आज जमीनी स्तर पर आरक्षण के साथ दस लाख पंचायत सदस्य हैं जो विकास प्रक्रिया में भागीदार के रूप में आगे आए हैं।

भारत सरकार ने संरक्षित भेदभाव या आरक्षण की नीति के माध्यम से अनुसूचित जाति की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए संरचनात्मक उपाय किए हैं। सुरक्षात्मक भेदभाव एक सकारात्मक सरकारी कार्रवाई है जो अनुसूचित जातियों की संस्कृतिकरण प्रक्रिया को प्रोत्साहित करती है। अनुसूचित जाति का एक सदस्य उच्च जातियों के साथ तालमेल बिठाने के लिए अपने औपचारिक दर्शन, रीति–रिवाजों और जीवन शैली को अपनाता है। राजनीतिक आरक्षण (अनुच्छेद 330 और 332 के तहत विधानसभाओं और पंचायतों में 18ः सीटें अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित हैं),शैक्षिक आरक्षण (अनुच्छेद 15(4) और 29 के तहत शैक्षिक और तकनीकी संस्थानों में 20 प्रतिशत सीटें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित हैं), और नौकरी आरक्षण (अनुच्छेद 16(4) और 32 के तहत 3 प्रतिषत) सुरक्षात्मक भेदभाव बनाते हैं। न्यूनतम हिस्सेदारी सुनिश्चित करने के अलावा, आरक्षण सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा देता है और अनुसूचित जातियों के भीतर वर्ग चेतना को बढ़ाता है। आरक्षण की नीति ने मुख्य रूप से उन व्यक्तियों को लाभान्वित किया है जो वर्तमान में उच्च आय वर्ग में हैंय फिर भी, ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले 5 प्रतिशत से भी कम लोगों को आरक्षण के परिणामस्वरूप रोजगार मिला है। तमिलनाडु के आंकड़ों के अनुसार, अनुसूचित जातियों के हिंदुओं का उच्च व्यावसायिक श्रेणियों में अनुसूचित जातियों के ईसाइयों की तुलना में थोड़ा अधिक प्रतिनिधित्व है। बालाकृष्णन (1993) के अनुसार, यह आरक्षण नीति का परिणाम हो सकता है, जो ईसाई अनुसूचित जातियों की तुलना में हिंदुओं का पक्षधर है। दुर्भाग्य से, जिस तरह से आरक्षण नियमों को लागू किया गया है वह हमेशा सही नहीं रहा है। क्योंकि जिद्दी सामाजिक ताकतें अक्सर अनुसूचित जातियों की उन्नति में बाधा डालती हैं, वे सरकार के सुरक्षात्मक भेदभावपूर्ण उपायों की अप्रभावीता से अवगत हैं। चूंकि इसमें जांच करने का अधिकार नहीं है, नागरिक अधिकार प्रवर्तन प्रकोष्ठ, जो आरक्षण के गैर–कार्यान्वयन और अनुसूचित जातियों के आर्थिक शोषण की जांच करने वाला है, एक उपयोगी संगठन की तुलना में अधिक हंसी का पात्र है। इसके अलावा, उत्पीड़न और गुलामी का एक लंबा इतिहास अनुसूचित जातियों के सदस्यों के लिए कम समय में सरकार के लाभों का पूरी तरह से उपयोग करने के लिए आवश्यक आत्मविश्वास हासिल करना मुश्किल बनाता है। सुभाराव (1982) के अनुसार, आरक्षण नीति आवश्यक है, लेकिन इसे उत्कृष्टता और टेलनेट से समझौता करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। लेकिन आरक्षण के प्रभावों में से एक यह है कि वे अनुसूचित जातियों को और अधिक अलग–थलग महसूस कराएंगे क्योंकि उन्हें एक अलग समूह के रूप में माना जाता रहेगा जो आरक्षण का लाभ प्राप्त करता है और बाकी समाज के साथ फिट नहीं

बैठता है। भारतीय संविधान में महिलाओं के कल्याण के लिए विशिष्ट सामाजिक कानून हैं। संविधान के अनुच्छेद 50 के तहत महिलाओं को विशेष दर्जा और सुरक्षा दी गई है, जो कुछ मायनों में उन्हें समाज में वंचित लोगों के समान ही मानता है।

समान कार्य के लिए समान पारिश्रमिक की गारंटी राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत (अनुच्छेद 39) द्वारा दी गई है, चाहे व्यक्ति का लिंग कुछ भी हो। हिंदू विवाह और तलाक अधिनियम, 1955 जैसे कई कानून महिलाओं और उनके अधिकारों की रक्षा और बचाव के लिए पारित किए गए थे, जो अनुच्छेद 243 और अनुच्छेद 243 (1) में सूचीबद्ध हैं। 2000 का घरेलू हिंसा विधेयक, 1956 का हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 का हिंदू संरक्षकता अधिनियम, 1961 का दहेज निषेध अधिनियम, 1961 का मातृत्व लाभ अधिनियम, 1976 का समान पारिश्रमिक अधिनियम और 1999 का कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न अधिनियम।

निष्कर्ष

महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने में सरकारी नीतियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। उल्लेखनीय रूप से, भारतीय संविधान के 73वें और 74वें संशोधन, आरक्षण नीति, रियायतें, सामाजिक कानून और विशिष्ट कानूनों की शुरूआत को इस संबंध में महत्वपूर्ण पहल के रूप में पहचाना गया है। फिर भी, इन युक्तियों का कार्यान्वयन वांछित परिणाम प्राप्त करने में अप्रभावी रहा, जिसका मुख्य कारण नौकरशाही और प्रणालीगत कमियाँ थीं। सरकार ने महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए कई पहल की हैं, जैसे कि लड़कियों के स्कूल, महिला कॉलेज और विश्वविद्यालय जैसे शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना। इसके अतिरिक्त, सरकार ने महिलाओं के लिए विशिष्ट अवसर प्रदान करने के लिए रोजगार और सेवा में आरक्षण नीतियों को अपनाया है। इन परिस्थितियों के बावजूद, मीडिया रिपोर्टों से यह स्पष्ट है कि देश में महिलाएँ समाज में अवसरों से वंचित हैं। इसके अलावा, ऐसे उदाहरण भी हैं जब कुछ महिलाएँ हाशिए पर जा रही हैं, जिससे ऐसी घटनाएँ हो रही हैं जो पुरानी यादों को जगाती हैं। इस संदर्भ में, महिलाओं को पुरुषों के साथ लैंगिक समानता प्राप्त करने में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। प्रशासन ने समाज में लैंगिक समानता प्राप्त करने के उद्देश्य से उपाय लागू किए हैं। यह देखा गया है कि हमारे देश में महिलाएँ आम तौर पर समुदाय में अपने पुरुष समकक्षों के साथ घरेलू और सामाजिक कार्यों में संलग्न रहती हैं।

राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में महिलाएं समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं तथा उसे विकास की ओर ले जाती हैं। महिलाओं के उज्ज्वल भविष्य के लिए आर्थिक आत्मनिर्भरता, उचित शिक्षा, स्वास्थ्य एवं पोषण की सुविधाएं आवष्यक हैं। महिला नेतृत्व भी उनके सशक्तीकरण का एक प्रवेश द्वार है। पंचायती राज संस्थाएं प्राचीन काल से ही भारतीय समाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। स्थानीय स्वशासन में लोगों की भागीदारी सामाजिक–आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में परिवर्तन लाने का एक महत्वपूर्ण साधन है। इस लोकतांत्रिक प्रक्रिया में देश के प्रत्येक व्यक्ति को स्थानीय स्वशासन में भाग लेना होता है। भारत सरकार ने 73वां संशोधन अधिनियम 1992 पारित किया जो 24 अप्रैल 1993 से लागू हुआ तथा अनुच्छेद 243 (घ) के अंतर्गत स्थानीय स्वशासन में महिलाओं के आरक्षण का प्रावधान किया गया। शिक्षा एवं कौशल का अभाव, आर्थिक निर्भरता, कानूनी अधिकारों का प्रयोग न करना, परिवार के मुखिया द्वारा उनके निर्णय को अस्वीकार करना, पुरुष प्रधानता, सांस्कृतिक एवं पारंपरिक बाधाएं, समाज में निम्न स्थिति। इसलिए, वर्तमान अध्ययन ने जमीनी स्तर की

राजनीति में महिलाओं की स्थिति की जांच करने के लिए सर्वेक्षण–आधारित अध्ययन करके इस अंतर को भरने का प्रयास किया। वर्तमान अध्ययन महिला नेताओं की सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि की जांच करने के लिए सार्थक होगा और जमीनी स्तर की राजनीतिक राजनीति में महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली विभिन्न समस्याओं की पहचान करने में भी सहायक होगा। इसलिए, अध्ययन ने कुछ ऐसे कारकों का सुझाव दिया है जो महिलाओं को जागरूकता बढ़ाने और आर्थिक, सामाजिक और निर्णय लेने की क्षमता को बढ़ाने में सहायता करते हैं।

संदर्भ

1. अग्रवाल, जे.सी. (2010), विकासशील समाज में शिक्षक और शिक्षा, विकास प्रकाशन गृह प्रा. लि. नई दिल्ली–110014
2. ब्राइट, प्रीतम सिंह (संपादन), प्रतियोगिता रिफ्रेशर, अगस्त, 2010, नई दिल्ली।
3. हसनैन, नदीम, भारतीय समाज और संस्कृति, जवाहर प्रकाशक और वितरक, 2004, नई दिल्ली।
4. डी. भट्टाचार्य, (2013), शिक्षा का समाजशास्त्रीय आधार, डोरलिंग किंडरस्ले प्रा. लि. नई दिल्ली 110017, भारत।
5. किदवई, ए.आर, (संपादित) उच्च शिक्षा, मुद्दे और चुनौतियां, विवा बुक्स, 2010, नई दिल्ली), कौली, सोनायल, रीना, खंड–3, योजना, अक्टूबर 2012, 8 एक्सप्लेनड ईस्ट, कोल–700069।
6. दत्ता, शुभा, बर्तमान, 24–09–2014, प्रा.लि. 6 जे.बी.यालडेन एवेन्यू, कोलकाता–700105